वर्ष 26

वेदान्त आश्रम एवं मिशन की मासिक ई-पत्रिका

अंक 7

वेदान्त पीयूष

जुलाई 2026

सम्पादिका :
स्वामिनी अमितानन्द सरस्वती

वेदान्त पीयूष

जुलाई २०२६

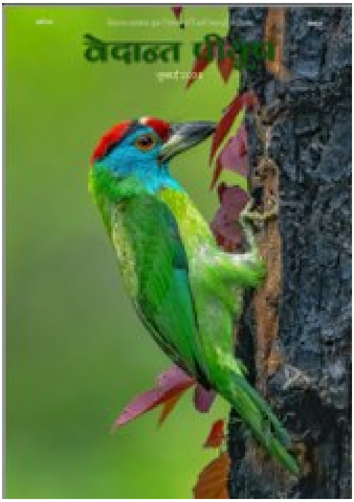

वेदान्त आश्रम,

ई - 2950, सुदामा नगर

इन्दौर - 452009

Web: https://www.vmission.org.in

email : vashram.in@gmail.com

विषय सूचि

०२	प्रकाशक
०५	श्लोक
०६	सन्देश
१६	वाक्यवृत्ति
२३	गीता और मानवजीवन
३०	जीवन्मुक्त
३६	कैकेयी चरित्र
४१	कथा – बाली और हनुमान
४६	आश्रम एवं मिशन गतिविधियां
६०	कार्यक्रम
६३	इन्टरनेट
६४	लिन्क

आत्मबोध - श्लोक ५९

तद्युक्तमखिलं वस्तु व्यवहारस्तदन्वितः।
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म क्षीरे सर्पिरिवाखिले।।

समस्त पदार्थ ब्रह्म के द्वारा ही व्याप्त है। तथा समस्त चेष्टाएं ब्रह्म के कारण ही सम्भव है। अतः ब्रह्म समस्त पदार्थों में उसी तरह व्याप्त है, जैसे दूध में मक्खन।

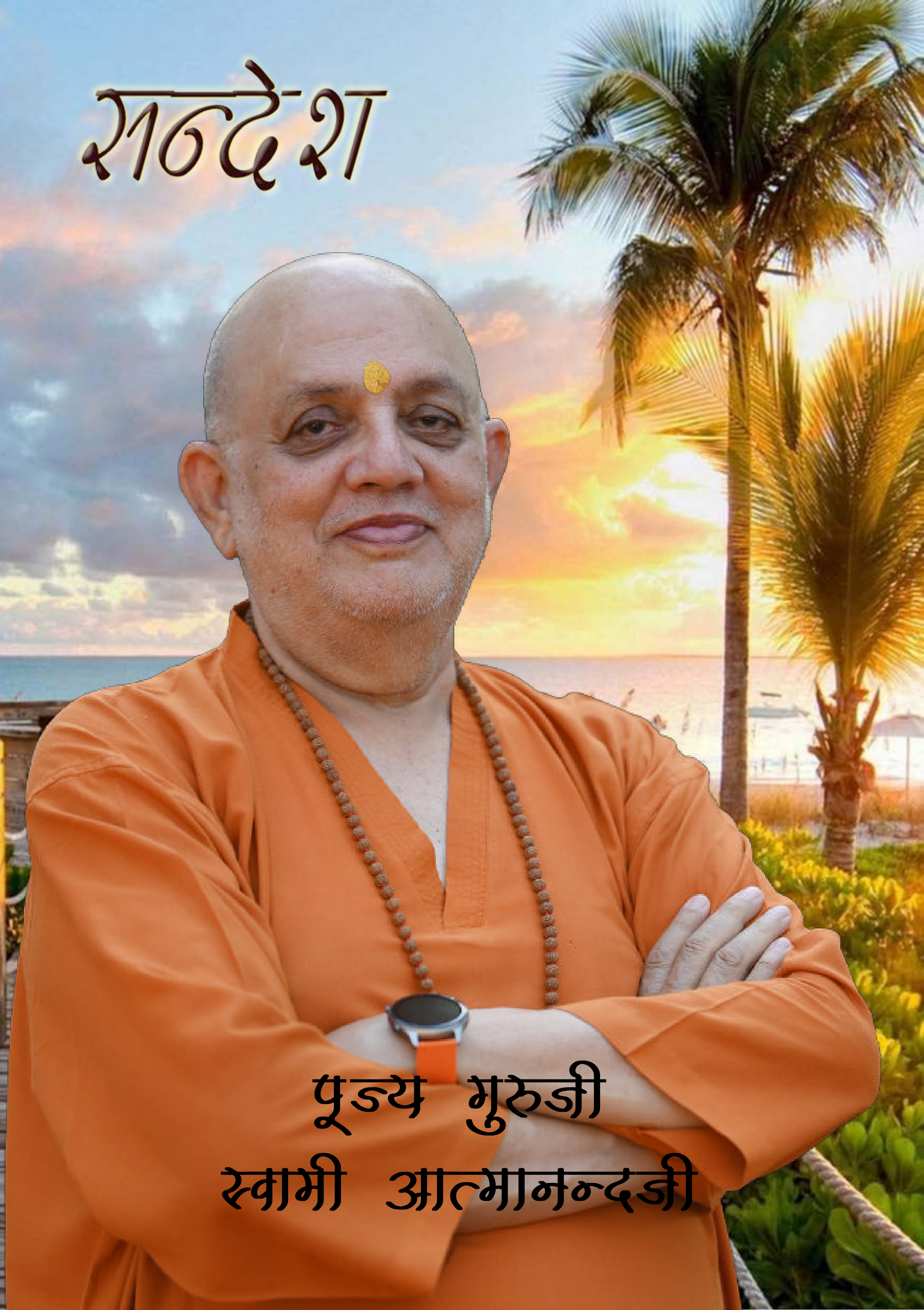
सन्देश
पूज्य गुरुजी
स्वामी आत्मानन्दजी

योगारूढ

योगारूढ ही वास्तविक योगी है–

‘भगवद्गीता के छठे अध्याय में योगारूढ शब्द का प्रयोग उस साधक के लिए किया गया है जो अन्ततः योगी बन चुका है। योगारूढ का शाब्दिक अर्थ है जो योग में आरूढ हो गया हो अर्थात् जिसने योग की अवस्था प्राप्त कर ली हो। यह वही साधक है जिन्होंने प्रारम्भ में आरुरुक्षु योगी बनने की तीव्र इच्छा रखी थी और अब अपने उस लक्ष्य को प्राप्त कर चुका है। इस यात्रा

में उसके जीवन में बहुत बड़ा आन्तरिक परिवर्तन आ चुका होता है।

योगारूढ़ की परिभाषा

भगवान श्रीकृष्ण योगारूढ़ का वर्णन ऐसे व्यक्ति के रूप में करते हैं जो विविध व्यक्तियों, परिस्थितियों तथा उपलब्धियों के बीच में रहते हुए भी अपनी जाग्रति 'विवेक' और 'सजगता' के कारण प्रत्येक वस्तु एवं परिस्थिति को वस्तुनिष्ठ (Objectively) दृष्टि से देखता है। उसके मन में व्यक्तिगत लाभ या हानि के सम्बन्ध में किसी प्रकार का संकल्प या आग्रह नहीं रहता। ऐसा इसलिए सम्भव होता है क्योंकि उसके भीतर यह स्पष्ट और गहन विवेक जाग्रत हो चुका होता है कि उसके जीवन का वास्तविक लक्ष्य क्या है? उसके लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण है 'मन की समता 'समत्व' तथा बुद्धि की निष्पक्षता जिससे वह प्रत्येक परिस्थिति तथा

प्रत्येक व्यक्ति के गुण-दोषों का यथार्थ आकलन कर सके।

योगारूढ का लक्ष्य

यदि हम बन्धन और मुक्ति के वास्तविक स्वरूप का विचार करें तो स्पष्ट होता है कि जीवन का एकमात्र लक्ष्य है 'सत्य का ज्ञान प्राप्त करना'।

गीता के द्वितीय अध्याय में भगवान ने दो मूल तत्त्व बताए हैं 'सत्' -जो त्रिकालाबाधित सत्य है, जो सदा था है और रहेगा। 'असत्' जो तीनों कालों में स्वतंत्ररूप से कभी नहीं रहता। किन्तु अज्ञानवश कुछ समय के लिए प्रतीत होता है। वास्तव में वही मिथ्या है। योगारूढ व्यक्ति असत् को असत् के रूप में देखना सीख जाता है। और जब यह विवेक पूर्णरूप से दृढ़ हो जाता है। तब 'ब्रह्मविद्या' की कृपा से वह अन्ततः सत् का प्रत्यक्ष साक्षात्कार भी कर लेता है।'

योगारूढ का वास्तविक स्वरूप – वैराग्य

योगारूढ की सबसे मूल्यवान विशेषता है ‘विवेकजन्य वैराग्य’। यह वैराग्य किसी निराशा या दु:ख से उत्पन्न नहीं होता। बल्कि सत्य के यथार्थ ज्ञान से उत्पन्न होता है। वह संसार के समस्त परिवर्तनशील पदार्थों को स्पष्ट रूप से ‘मिथ्या’ जानता है। इसलिए किसी व्यक्ति, वस्तु अथवा परिस्थिति से मोहित नहीं होता।

यह विवेक उसे महापुरुषों के सत्संग से, वेदान्त शास्त्रों के नियमित अध्ययन से, उन पर गहन मनन एवं निदिध्यासन–ध्यान से प्राप्त होता है। वेदान्त ही शाश्वत ज्ञान का प्रमाण शास्त्र है। ऐसे योगारूढ कर्मक्षेत्र में नि:स्वार्थभाव से कार्य करते हुए भी निरन्तर शास्त्र अध्ययन और ध्यान का अभ्यास करते रहते हैं। इसीसे उनमें यह क्षमता आती है कि वे परिवर्तनशील ही देखते हैं। अत: बाहरी वस्तुओं के प्रति उनके मनमें कोई अतिरिक्त संकल्प या आसक्ति नहीं रहती।

वे इस सम्पूर्ण जगत को सर्वशक्तिमान एवं सर्वज्ञ ईश्वर की माया द्वारा संचालित व्यवस्था के रूप में देखते हैं। इसलिए उनमें न केवल पूर्ण स्वीकृति होती है। बल्कि यह भी समझ होती है कि जो कुछ घटित हो रहा है, वह ईश्वर की व्यवस्था के अन्तर्गत ही है।

योगारूढ वेदान्त का आदर्श विद्यार्थी

योगारूढ वे विशिष्ट साधक हैं, जिनका मन सदैव सजग, शान्त, निरीक्षणशील, सात्विक तथा अत्यन्त सूक्ष्म एवं बुद्धिमान होता है। वे अपने भीतर पूर्ण शान्ति का अनुभव करते हैं और जो भी कार्य करते हैं, प्रेमपूर्वक तथा श्रेष्ठतम ढंग से करते हैं।

अब उनके जीवन में केवल एक कार्य शेष रह जाता है। सत् को केवल जानना नहीं, बल्कि स्वयं उसी सत् रूप में अपने स्वरूप का प्रत्यक्ष अनुभव करना।

उसमें तीन चरण हैं

1. सत् को सत् के रूप में जानना।

up

2. सभी शंकाओं का पूर्ण समाधान करना।

3. उस सत्यस्वरूप को अपनी वास्तविक पहचान स्वरूप के रूप में स्वीकारकर उसमें स्थित हो जाना।

ऐसे लोग वास्तव में स्वस्थ, संतुलित और समाज के लिए वरदान सिद्ध होते है। यही आत्मज्ञान के अधिकारी एवं आदर्श विद्यार्थी है।

जो अभी योगारूढ नहीं हैं, वे सामान्यतः असन्तुष्ट, असुरक्षित, भयग्रस्त, अनेक इच्छाओं से ग्रस्त, राग-द्वेष से पीडित, अहंकारयुक्त तथा मानसिक तनाव से भरे हुए होते हैं। ऐसे लोग वास्तविक अर्थ में स्वस्थ नहीं होते। वे सदैव मानसिक अशान्ति में रहते हैं। उनका ध्यान प्रायः केवल अपनी सुविधा और असुविधा पर केन्द्रित रहता है। इसलिए वे वस्तुनिष्ठ श्रोता नहीं बन पाते और न ही वेदान्त के योग्य विद्यार्थी सिद्ध होते है।

up

इसी कारण ऐसे व्यक्तियों को तत्काल संन्यास लेकर वेदान्त अध्ययन के लिए प्रेरित नहीं करना चाहिए।

जब प्रारम्भ में अर्जुन ने भगवान श्रीकृष्ण से कहा कि वह युद्ध छोड़कर शाश्वत सत्य के चिन्तन में लगना चाहता हैं। तब भगवान ने उसकी उस इच्छा को स्वीकार नहीं किया। उन्होंने पहले उसे 'योगारूढ' बनने का लक्ष्य दिया, क्योंकि केवल योगी ही ब्रह्मविद्या का अधिकारी बन सकता है।

ॐ तत्सत्।

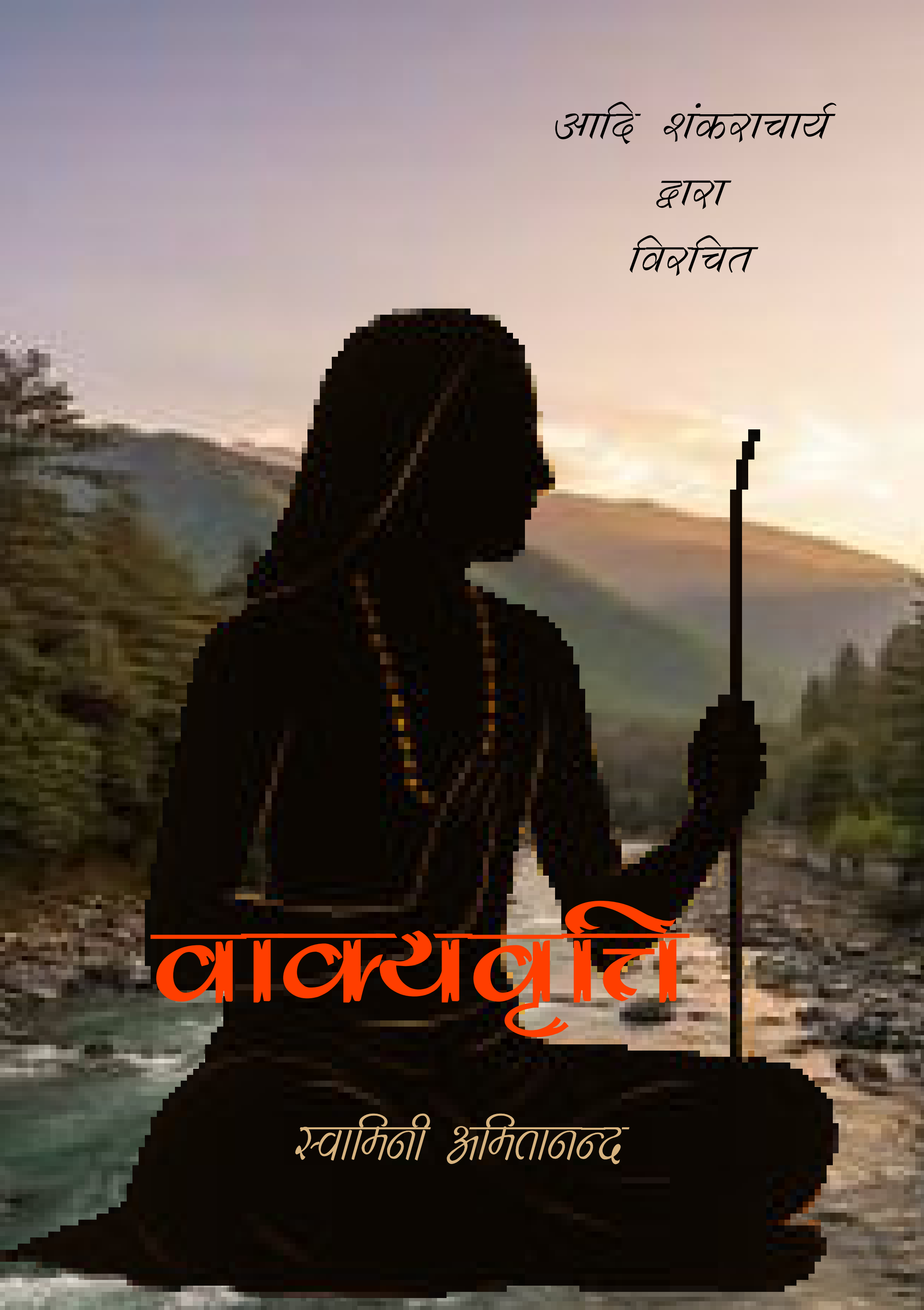
आदि शंकराचार्य
द्वारा
विरचित
वाक्यवृत्ति
स्वामिनी अमितानन्द

श्लोक – ३६

कर्मणां फलदातृत्वं यस्यैव श्रूयते श्रुतौ।
जीवानां हेतु कर्तृत्वं तद्ब्रह्मेत्यवधारय॥

श्रुति में जिसे समस्त कर्मों का एकमात्र फलदाता तथा जीवों में कर्म करने का सामर्थ्य प्रदाता कहा गया है, वह ही ब्रह्म है – ऐसा निश्चय करो।

वाक्यवृत्ति
श्लोक संख्या : ३६

आचार्य ने पूर्व श्लोक में परमात्मा का सृष्टि में जीवरूप से प्रवेश की बात बताई। अब यहां ईश्वर के अर्थ को समझा रहे हैं।

श्रुति में ईश्वर को कर्मफलदाता 'कर्मणां फलदातृत्वं' की तरह बताया गया है। जीव अपने कर्म के अनुरूप विविध लोकों की प्राप्ति करके कर्मफल का भोक्ता बनता हैं। जीव के द्वारा किए गए कर्म का फल उसे तत्काल या कालान्तर में प्राप्त होता है। यह फल कैसे प्राप्त होता है? जीव के जीवन की प्रत्येक

परिस्थिति उसके किसी न किसी कर्म का फल होती है। जगत में किसी भी घटना घटित होने के लिए या किसी भी परिस्थिति का सृजन किसी एक घटक पर आश्रित नहीं होता है। किन्तु उसके पीछे सम्पूर्ण समष्टि का योगदान होता है। जैसे कहावत है कि 'किसी एक सेबफल के निर्माण में पूरे ब्रह्माण्ड की अपेक्षा होती है।' उसके अन्तर्गत दृष्ट-अदृष्ट सभी घटक होते हैं। उन सबके नियंत्रित होने पर एक परिस्थिति का निर्माण होता है अर्थात् जीव के किसी कर्म का फल प्राप्त होता है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को नियंत्रित करनेवाली कोई न कोई शक्ति होनी चाहिए। और वह शक्ति स्वयं चालित नहीं हो सकती। अत: कोई एक चेतन सत्ता है, जो उसे संचालित करती है। ऐसी मायाशक्ति से युक्त चेतना को ही ईश्वर कहा जाता है। ईश्वर ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के नियन्ता है, और वे ही फलदाता है।

ईश्वर कर्मफलदाता है, तो दूसरी ओर यह हमारी समझ

है कि जीव ही कर्म का कर्ता है। एक दृष्टि से यह बात सत्य है। किन्तु आचार्य यहां बता रहे हैं कि जीवानां हेतुकर्तृत्वं-अर्थात् जीव के कर्तृत्व का हेतु भी ईश्वर ही हैं। मानों ईश्वर ही जीव को कर्म के लिए प्रेरित करता हैं। जीव एक संकुचित अस्मिता से युक्त चेतना है। अतः उसके सामर्थ्य, उसके पास उपलब्ध करणादि भी सीमित है। जीव को कर्म करने के लिए अनेकों वस्तुओं पर आश्रित होना पड़ता है। जैसे इन्द्रियादि का सामर्थ्य, बाहरी परिस्थिति की अनुकुलता, विविध दैवीशक्तियां-जो इन्द्रियादि को अनुगृहीत करती है। अर्थात् आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक इन सब को अनुकुल बनाकर जीव को कर्म के लिए समर्थ बनाता हैं। तब जीव के द्वारा कोई कर्म सम्पन्न होता है। यहां आचार्य ने जिस श्रुति का उल्लेख किया है, उस कौषीतकि उपनिषद् में बताया कि-'एष ह्येव साधू कर्म कारयति।' अर्थात् ईश्वर ही जीव को अच्छे या बुरे कर्म करने का सामर्थ्य व

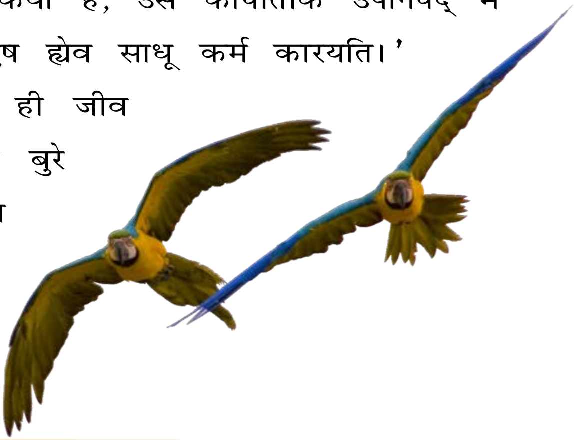

up

परिस्थिति प्रदान करते हैं। यद्यपि ईश्वर अच्छे–बुरे कर्म का सामर्थ्य प्रदान करते हैं, किन्तु जीव को अपनी बुद्धि के द्वारा विवेक करके उसे करने की स्वतंत्रता भी होती है। तदनुरूप ईश्वर कर्मफल प्रदान करते हैं।

इस प्रकार ईश्वर जीवों के कर्मफलदाता भी हैं तथा जीवों को कर्म का सामर्थ्य प्रदान करके कर्म करवानेवाले, अर्थात वे ही जीव के कर्म के कारयिता भी हैं। वे ही सोपाधिक ब्रह्म है – ऐसा निश्चय करो।

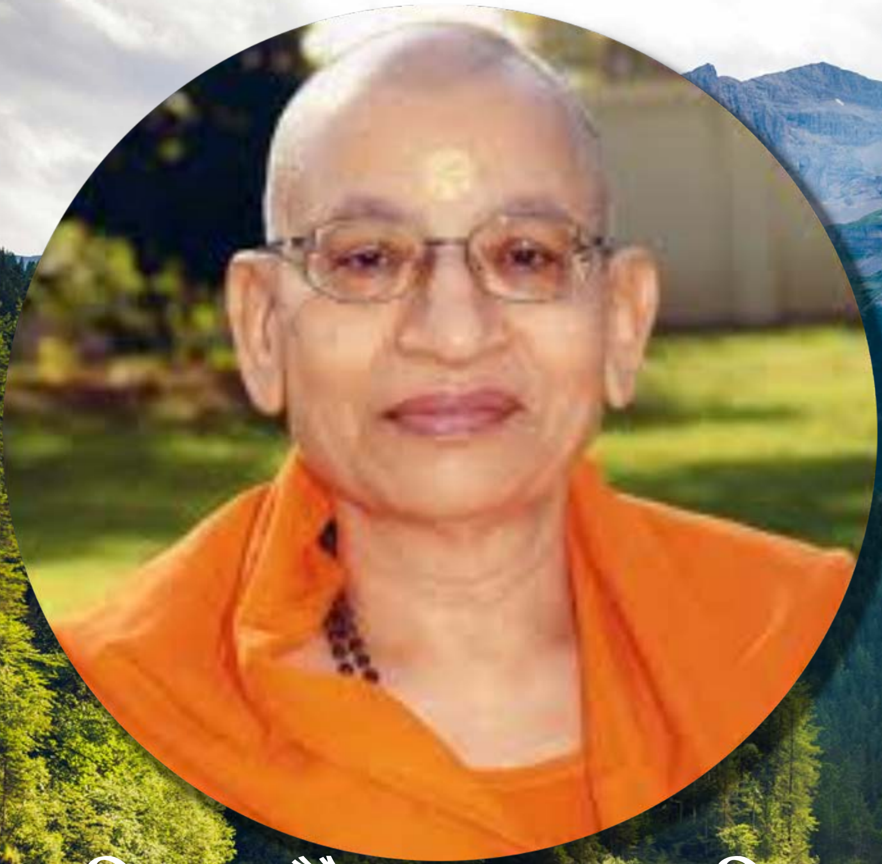

गीता और मानवजीवन

पूज्य स्वामी विदितात्मानन्दजी

- ४० -

दो प्रकार की सम्पत्ति

गीता और मानवजीवन

दो प्रकार की सम्पत्ति

भगवान भगवद्गीतामें कहते हैं कि, काम, क्रोध और लोभ यह तीन नरक के, यातना के द्वार है। इसलिए उसमें से मुक्त हुआ मनुष्य ही अपना श्रेय अर्थात् कल्याण कर सकता है। जब तक मेरे जीवन का संचालन इन आवेगों से होता है, तब तक मेरे जीवन में यातनाएं, दुःख और अंधकार अर्थात् अज्ञान की प्रधानता रहती है। इन तीनों आवेगों से मुक्त होने पर मेरे कल्याण का मार्ग मैं स्वयं ही खोलता हूं और जीवन के परं ध्येय को प्राप्त करने की दिशा में आगे बढ़ता हूं।

ऐसा नहीं है कि मात्र आध्यात्मिक उन्नति के लिए ही मनुष्य को इन तीन दुर्वृत्तियों से मुक्त होना आवश्यक है; व्यावहारिक सुख-शांति प्राप्त करने के लिए भी ऐसा करना आवश्यक है। क्योंकि जैसे जैसे इसमें से एक भी वृत्ति मेरे मन में है तब तब मैं दु:ख का अनुभव करता हूं, मन की शांति गंवाता हूं। इसलिए व्यावहारिक सुख-शांति का भी यह एक ही उपाय है। जिस मनुष्य को धनवान होना हो उसे धन प्राप्त करना पड़ता है। जिसे सत्तावान होना है, उसे सत्ता प्राप्त करनी पडती है, प्रतिष्ठावान होने के लिए प्रतिष्ठा प्राप्त करनी चाहिए। किन्तु जिसे सुखी होना है उसे क्या करना चाहिए? उसे कुछ भी प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं है, उसे तो किसी का त्याग करने की आवश्यकता है।

सुखी होने के लिए किसी बाह्य सम्पत्ति की आवश्यकता नहीं है। सुखी होनेके लिए तो आन्तरिक सम्पत्ति, जिसे दैवी सम्पत्ति कहते हैं, उसकी आवश्यकता है। कुरुक्षेत्र में पांडव और कौरवों का युद्ध वह दैवी और आसुरी सम्पत्ति के संघर्ष का प्रतीक है। प्रत्येक मानव के हृदय में दैवी–आसुरी सम्पत्ति का संघर्ष चलता है। हृदय में जब दैवी सम्पत्ति का प्रभाव है तब सुख के लिए मार्ग खुल जाता है। अपना जीवन आध्यात्मिक हो या न हो फिर भी मात्र सुखी होना हो तो भी बाह्य सम्पत्ति से सुख प्राप्त नहीं होता, आन्तरिक या दैवी सम्पत्ति से ही सुख प्राप्त होता है।

यह दैवी सम्पत्ति कैसे प्राप्त करें? दैवी सम्पत्ति प्राप्त नहीं करनी है। प्रत्येक मनुष्य स्वभाव से दैवी ही है, देव ही

है। यह देव प्रत्येक के हृदय में विराजमान है। स्वामी विवेकानंद बार बार कहा करते थे, 'हे मनुष्य! तुम तो अमृत के पुत्र हो। तुम तो देवता की सन्तान हो।' अर्थात् स्वभाव से देवता हो। कोई व्यक्ति यदि असुर की तरह वर्तन करता दीखें तो उसका कारण यह नहीं है कि वह स्वभाव से असुर है, किन्तु किसी कारण से आसुरी वृत्तियों ने उन पर कब्जा किया है। इसलिए उनका जो देवत्व है वह आवरित हो गया है। इसलिए मनुष्य को जो कुछ करना है, वह इतना ही कि आसरी वृत्ति का त्याग करना है।

गीता के सोलहवें अध्याय में यह दैवी और आसुरी दोनों प्रकार की सम्पत्ति का वर्णन किया गया है। आसुरी सम्पत्ति वह बन्धन का मार्ग है और दैवी सम्पत्ति मोक्ष अर्थात् मुक्ति का मार्ग प्रशस्त रकती है।

दंभ, दर्प, अभिमान, क्रोध, कठोरता, अज्ञान यह सब आसुरी सम्पत्ति है। अन्दर कुछ हो और बाहर कुछ दीखाना, जो नहीं है, उसे प्रदर्शित करना उसका नाम दंभ। हायर सेकण्डरी पास हो और अपने आपको पोस्ट ग्रेज्युएट बताना यह सब दंभ है। दर्प अर्थात् धन, परिवार आदि निमित्त से होनेवाला गर्व; अपने विषय में अत्यन्त उंचा ख्याल वह अभिमान; क्रोध, कठोर वचन बोलना यह पारुष और अज्ञान यह सब आसुरी सम्पत्ति है। जब अभय, आचरण की शुद्धि, ज्ञान और योग में निरंतर स्थिति, दान, इन्द्रिय संयम, यज्ञ, स्वाध्याय अथ्रात् वेदपठन, तप, ऋजुता अर्थात् सरलता, विचार, वाणी और व्यवहार की एक-रूपता, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शांति, अन्य के दोषों की चुगली न करना वह, जीवमात्र के प्रति दया, विषयों के प्रति अलोलुपता,

कोमलता, लज्जा और अचापल्य अर्थात् बगैर प्रयोजन के इन्द्रियों की, वाणी की चेष्टा न करना, इन सबको भगवान दैवी सम्पत्ति कहते हैं। इसकी बहुत लम्बी सूचि है। किन्तु हमारी सहुलियत के लिए भगवान अन्त में काम, क्रोध और लोभ – इन तीनों पर ही ध्यान देने और उसका त्याग करना बताते हैं। इन तीनों का त्याग करने से हृदय में ही जो दैवी सम्पत्ति स्वभाव से ही संग्रहित है, उसे व्यक्त होने का अवकाश मिलेगा।

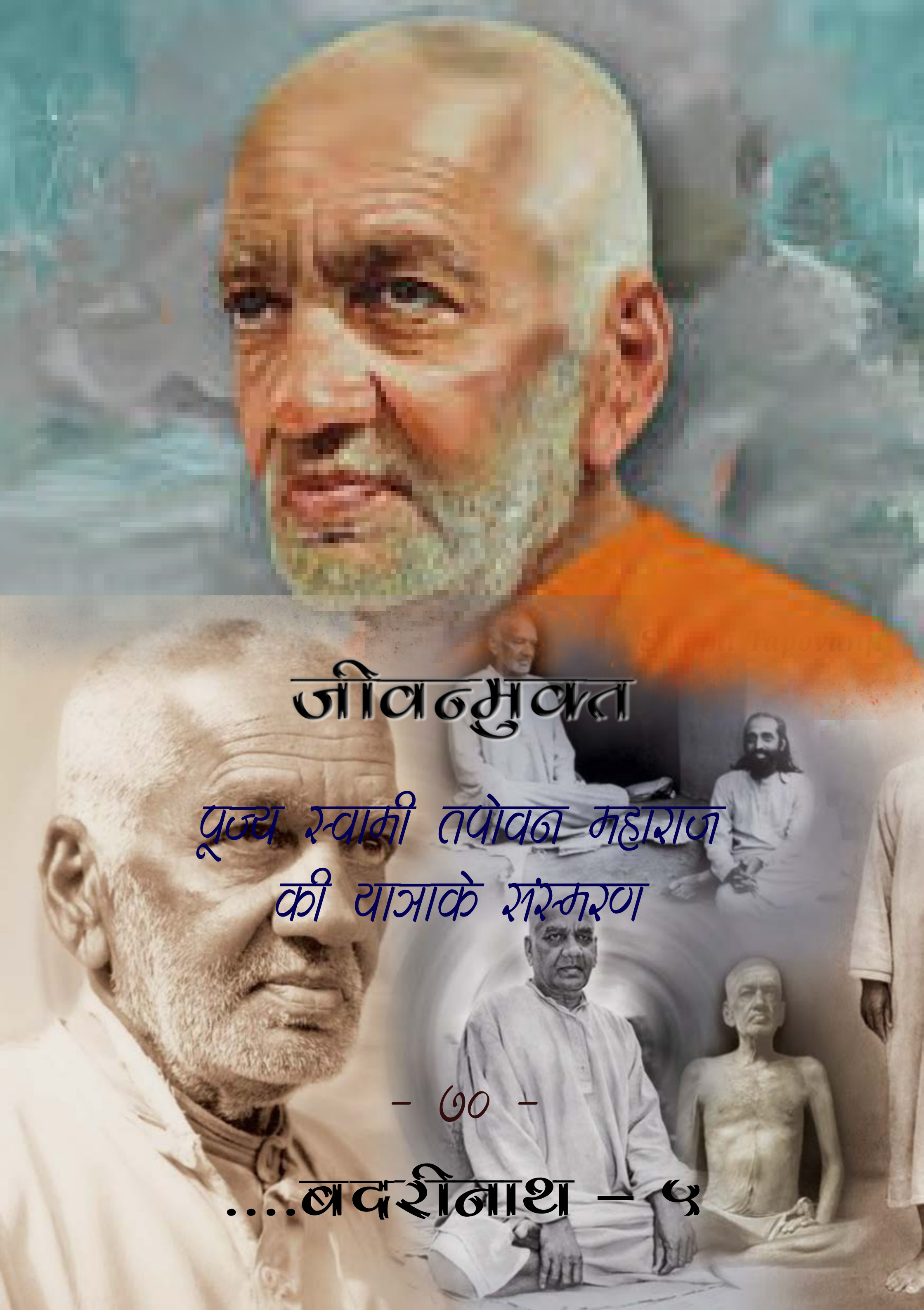

जीवन्मुक्त

पूज्य स्वामी तपोवन महाराज की यात्राके संस्मरण

- ७० -

...बदरीनाथ – ५

जीवन्मुक्त बद्रीनाथ – ०५

इतिहासकार मानते हैं कि ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में 'ब्रह्मसूत्र' नाम से प्रसिद्ध बादरायण सूत्र लिखा गया था। वह ऐसा युग था जबकि हमारा देश तत्त्वचिंतन में बहुत ही सजग तथा प्रबुद्ध था। केवल हमारा देश ही नहीं, पाश्चात्य देश भी उस युग में प्रगाढ़ तत्त्व चिन्तन में संलग्न थे। लगभग इसी काल में, अर्थात ई.पू. चौथी–पांचवी सदी में सुकरात, प्लेटो आदि दार्शनिक यूनान में पैदा हुए थे और प्रपंच रहस्यों पर विचार करके कुछ तत्त्वपद्धतियों को प्रकट कर रहे थे। यहां यह उल्लेखनीय है कि जैसे सुकरात आदि के जन्मस्थान, जीवनकाल आदि का पाश्चात्य मनीषियों ने निर्णय कर दिया है, वैसे व्यास आदि के जन्मस्थान,

जीवनकाल आदि के बारे में भारतीय मनीषियों ने प्रमाणपूर्वक कोई निर्णय प्रस्तुत नहीं किये। फिर भी पुराणों और ऐतिहासिकों के वचनों के आधार पर यह समझने में तब तक कोई आपत्ति नही होनी चाहिए कि वेदव्यास कृष्ण द्वैपायन बदरिकाश्रम में रहनेवाले एक पूज्य व्यक्ति थे, जब तक इसका बाधक कोई प्रमाण नहीं मिलता 'बादरायण' का नाम ही उद्घोषणा करता है कि बदरी निवासी थे।

सरस्वती के तट में यह गुफा कहाती है। इस गुफा में तो व्यास रहा करते थे। व्यास की महिमा तथा बदरिक-आश्रम की महिमा को मैं भिन्न-भिन्न नहीं मानता। अर्थात् व्यास की कोई महिमा थी तो उसीसे बदरीवन महिमाशाली बन गया। एक पौराणिक सुप्रसिद्ध कथा का यहा विवरण देनेकी आवश्यकता नहीं है

up

कि जिसमें इस दिव्य स्थान को नर–नारायणों का तप:स्थान तथा साक्षात् नारायण की निवासभूमि कहा गया है, और इसी कारण इस दिव्य धाम को लोकोत्तर महिमा मिली है। इस प्रसिद्ध बात का निषेध करने के लिए हमारे पास कोई प्रमाण नहीं है कि बादरायण ने यहीं रहकर वेदान्तसूत्र, महाभारत आदि ग्रंथों की रचना की थी। व्यास की महिमा का आदर करते हुए व्यासगुहा में कभी कभी जाकर बैठ़ना मेरे लिए कितना प्रमोददायक रहा है! पौराणिक लोग कई पुराण वचनों के प्रमाण देते हुए यह समर्थन करते है कि केवल व्यास ही नहीं, बल्कि सनकादि, भृगु, नारदा, शुक्र आदि अनेक पौराणिक ऋषि पुंगव भी यहीं विहार करते थे।

लीजिएं, यह गौडपाद शिला है। गौडपाद अलकनंदा किनारे की इस शिला पर आकर बैठा करते थे। पुरखे लोग यहाँ

तक कहते हैं कि उन्होंने अपनी सुप्रसिद्ध 'माण्डूक्य कारिका' इसी शिला पर बैठकर लिखी थी। इतिहासवेत्ता कहते हैं कि गौडपाद आठवीं शताब्दी ईस्वी के आचार्य थे। उपनिषदों के आशय अद्वैतवाद को अर्थात् मायावाद को, शास्त्रीय रीति से उपपत्तिपूर्वक निर्विवादरूप में सबसे पहले संसार के सामने रखनेवाले गौडपाद थे। आज के कुछ आलोचकों का अभिप्राय है कि वे बुद्ध के अनुयायी थे। क्योंकि एक तो इनका जन्म अश्वघोष, नागार्जुन आदि बौद्ध धर्म के आचार्यो के बाद हुआ; दूसरे उन्होंने बौद्ध धर्म के कई दृष्टांतों तथा सिद्धान्तों को अपने ग्रन्थों में स्वीकार किया हैं तथा इनकी ग्रंथशैली भी बौद्धग्रंथों की शैली के अनुकूल है। उदाहरणार्थ, नागार्जुन के ग्रंथ के शून्यवाद सिद्धांत और 'लंकावतार' में दिखायी पडने वाले विज्ञानवाद तत्त्व दोनों को मिलाने पर माण्डुक्यकारिका बनी है, तथा 'अलात' अंगारा आदि उनके दृष्टांत बौद्ध

ग्रन्थों में सुप्रसिद्ध हैं। जगत् को भ्रांति कल्पित तथा मिथ्या सिद्ध करनेवाले शंकर पर भी जब कुछ प्राचीन आचार्यो ने प्रच्छन्न बौद्ध होने का आक्षेप किया है तो इसमें क्या आश्चर्य यदि मायावाद के अत्युच्च सिद्धांत 'अजातवाद' का उपदेश देनेवाले गौडपाद पर भी कुछ लोग बौद्ध होने की शंका करें। दूसरे धर्मो से अपने अनुकूल कुछ सिद्धांतों को स्वीकार करने मात्र से यह समझना उचित नहीं है कि ग्रन्थकार उस धर्म के अनुयायी हैं। जो भी हो, यह सब हमारी बात के लिए अप्रासंगिक है। हम केवल यही विश्वास करे कि शुक ब्रह्म महर्षि के शिष्य तथा आचार्यकुल कूटस्थ गौडपाद भी इस बदरीकाश्रम में रहा करते थे। इन्हीं गौडपाद के प्रमुख शिष्य शंकराचार्य का बदरिकाश्रम के साथ सम्बन्ध था। इस तथ्य को सभी इतिहासकार स्वीकार करते हैं। यद्यपि इस सम्बन्ध में कोई प्रबल प्रमाण

नहीं मिलता कि शंकर ने यहां रहते हुए अपने सूत्रभाष्य आदि भाष्यों की रचना की थी, तथापि आप्तवाक्यों पर विश्वास कर लेना कहीं अधिक उपयुक्त होता है। यह जान लेने पर कि इसी बदरिकाश्रम में महान् ऋषिगण रहा करते थे–हमारा मन आनन्द से रोमांचित तथा उल्लसित हो उठता है।

इसके अतिरिक्त प्रकृतिसुषमा की दृष्टि से भी बदरिकाश्रम संसार के दर्शनीय स्थानों में एक है। वर्षाकालीन कई तरह के विचित्र पौधों तथा तरह तरह के पुष्पों के साथ हरितवर्ण से भरे बदरीवन की प्रकृति शोभा! अहा! हा! दिव्य दिव्य ही कही जा सकती है। हिम संहति की कांति इस पुण्यधाम की प्राकृतिक सुन्दरता को और भी अधिक बढा रही है। पिछले ज्येष्ठ मास की पहली तारीख से तीन दिनों तक बदरीधाम में निरन्तर हिमवृष्टि

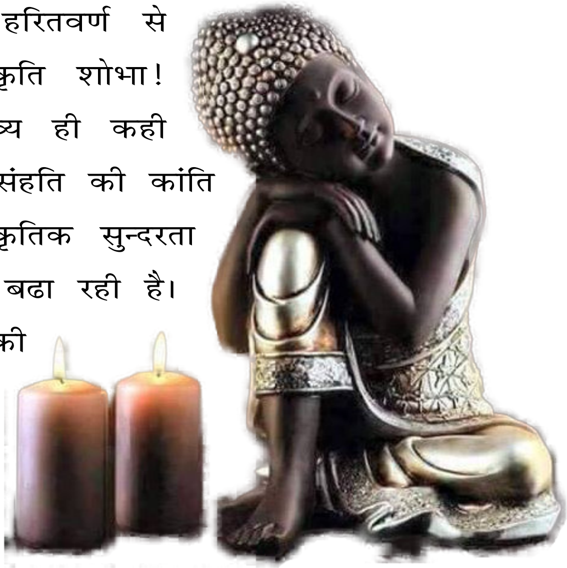

होती रही। इससे सभी दिशाएँ धवल–धवल होकर मानों रजताच्छन्न हो गयी है। यह दर्शन अनुपम था। इसी दिव्य दर्शन का मैं भी हिस्सेदार था। हिमदेवता की ऐसी विलास महिमा को देखने का भाग्य बदरीनाथ में इससे पहले मुझे कभी प्राप्त नही हुआ था।

प्रकृति ही ब्रह्म है। प्रकृति ब्रह्म से भिन्न कोई वस्तु नहीं है। प्रकृति की शोभा ब्रह्म की शोभा ही है। लेकिन शुद्ध एवं अकृत्रिम प्रकृति में ब्रह्म का प्रकाश अधिक प्रकट होता है। शुद्ध हो या अशुद्ध, जो व्यक्ति संपूर्ण प्रकृति को ब्रह्मरूप में तथा प्रकृति विलास को ब्रह्म–विलास के रूप में जानता है, वही सच्चा दार्शनिक है। वह सदा ब्रह्म के दर्शन करता है। वह सर्वदा आनन्द का अनुभव करता है। फिर उसके लिए योगियों की असंप्रज्ञात समाधि से कोई लाभ नहीं होता। वह स्वयं समाधि

स्वरूप बन चुका होता है। वह तथा उसके सभी कर्म समाधि स्वरूप ही होते हैं।

हे बदरीभूमि! तूं प्राकृतिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों से सम्पन्न है। इन दोनों शक्तियों का अनवरत प्रसार करते हुए कोटि-कोटि दुःखी जीव जन्तुओं पर अनुग्रह करती है। तेरी सदा जय हो।

श्री रामचरितमानस पर आधारित

— ०८ —

कैकेयी चरित्र

कैकेयी चरित्र – ०८

कैकेयी को स्वयं अकेले पड़ जाने की आशंका और भी अधिक संत्रस्त बना देती है। शालीनता का कोई बन्धन जो उनकी कार्यसिद्धि में बाधक बने, वह उसके लिए असह्य हो उठा। इसलिए वे जनरुचि के विरुद्ध कोई भी कार्य करने में संकुचित नहीं होती है। वे स्वयं बल्कल वस्त्र राघवेन्द्र के सामने लाकर रख देती हैं और स्पष्ट शब्दों में यह कह देती हैं कि तुम्हें अपनी ओर से वन जाने के लिए कोई भी नहीं कहेगा। स्नेह और आग्रह के द्वारा तुम्हें कर्तव्यपथ से विमुख करने का प्रयास किया जा रहा है। ऐसी स्थिति में तुम्हें स्वयं ही कर्तव्य के पालन में शीघ्रता करनी चाहिए। प्रभु रामभद्र कैकेयी की बातों से

अत्यन्त सन्तुष्ट हुएं। वे तत्काल मुनि–वेष बना लेते हैं। किन्तु कैकेयी की इस हृदयहीनता ने लोगों की दृष्टि में उन्हें घोर घृणा का पात्र बना लिया। फिर भी कैकेयी को यह विश्वास था कि एक बार भरत के सिंहासन पर बैठते ही सारा पासा पलट जाएगा। लोगों की घृणादृष्टि से वे अपरिचित नहीं थी। पर उनका यह सुदृढ़ विश्वास था कि जनरुचि परिवर्तनशील है। आज तो लोग आक्रोश प्रकट करते दिखाई दे रहे हैं, वे ही भविष्य में भरत की स्तुति करते हुए चरणों में नत होने लगेंगे। इसलिए भविष्य की सुखद कल्पना में उन्होंने वर्तमान की उपेक्षा कर दी। उन्हें यह गर्व था कि अकेले होने पर भी उन्होंने अपने उद्देश्य की उपलब्धि में सफलता प्राप्त कर ली।

राघवेन्द्र के वनगमन के पश्चात् महाराज श्री दशरथ की मृत्यु ने भी उन्हें मर्माहत नहीं किया। वे यही मानती रहीं कि अपने आग्रह के द्वारा उन्होंने

महाराज के यश:शरीर की रक्षा की है। इतिहास सर्वदा दशरथ की याद ऐसे महापुरुष के रूप में करेगा जिन्होंने सत्य की रक्षा के लिए बड़े से बड़ा बलिदान करने में भी संकोच नहीं किया। उन्हें विश्वास था कि यह यश महाराज को उन्हींकी दृढ़ता से प्राप्त हुआ है। इस तरह वे स्वयं को साधुवाद देती रहीं। किन्तु यह मनोविलास तब टूट गया, जब भरत ननिहाल से लौट कर आएं। नागरिकों की ओर से नगर में प्रविष्ट होते हुए श्री भरत का बड़ा ही उपेक्षापूर्ण स्वागत हुआ था। किन्तु कैकेयी के राजमहल में उस समय स्वर्णथाल सजाए जा रहे थे। कैकेयी राजमाता कहलाने की सुखद कल्पना में विभोर थीं। स्वर्णथाल में आरती उतार कर वे अत्यन्त सन्तुष्ट प्रतीत हो रही थीं, भरत की मुखाकृति पर शोक के चिह्न देखकर यदि उनके मन में कोई आशंका भी आई तो केवल यही कि

up

कहीं मेरे नैहर में कोई दु:खद घटना तो नहीं हुई। इस विषय में अपनी जिज्ञासा वे तत्काल प्रकट कर देती हैं। श्री भरत दिग्भ्रमित से सारे वातावरण को देखते हैं। नगर और महल के परिवार के कुशल की जिज्ञासा प्रकट करते हैं। कैकेयी सर्वप्रथम महाराज की मृत्यु का समाचार सुनाती हैं। किन्तु उन्होंने इस महान् दुर्घटना को लघुहानि के रूप में चित्रित करने का प्रयास किया। उन्होंने अपनी दृष्टि से एक महान् सर्वनाश बचा लिया था। इस भूमिका में वे मन्थरा का नाम स्मरण किए बिना नहीं रहती हैं। पर यह अवश्य है कि वे मन्थरा को वह प्रमुखता नहीं देती हैं, जिसकी वह भागीदार थी। उनकी कृतज्ञता के भाव में भी अपनी दयालुता का भाव प्रकट हो रहा था। उन्होंने सारा कार्य स्वयं बना दिया था, बेचारी मंथरा तो इसमें सहायक बनी थी। वे इसी रूप में उसका स्मरण करती हैं।

कथा प्रसंग

बाली और हनुमान

कथा प्रसंग – बाली और हनुमान

बाली का नाम संसार के सबसे पराक्रमी योद्धाओं में लिया जाता है। कहा जाता है कि किष्किन्धा के राजा सुग्रीव के बड़े भाई, अंगद के पिता तथा अप्सरा तारा के पति थे। महाबली बाली को एक विशेष वरदान प्राप्त था। उस वरदान के अनुसार जो भी योद्धा बाली के सामने युद्ध करने आता, उसकी आधी शक्ति स्वत: ही बाली में समाहित हो जाती थी। इसी कारण कोई भी वीर उसके सामने युद्ध करने का साहस नहीं करता था। बाली ने अपनी इसी अद्‌भुत शक्ति के बल पर अनेक असुरों का संहार किया था।

कहा जाता है कि जब रावण ने बाली के पराक्रम का

समाचार सुना, तो वह भी युद्ध करने जा पहुंचा। किन्तु बाली के सामने आते ही उसकी शक्ति क्षीण होने लगी। पौराणिक कथाओं के अनुसार बाली ने रावण को अपनी कांख में दबाकर छह महीने तक रखा। अन्ततः रावण ने अपनी पराजय स्वीकार कर ली और बाली से मित्रता कर ली।

इन विजयों के कारण बाली को अपने बल का अत्यधिक अभिमान हो गया था। किन्तु जिस बाली ने रावण जैसे महाबली को परास्त कर दिया था, उसका यह अभिमान अन्ततः हनुमानजी के सामने चूर हो गया। एक बार श्रीराम के परं भक्त हनुमानजी वन में गहन तपस्या कर रहे थे। उसी समय बाली वहां पहुंचा और अपने अभिमानवश उनकी तपस्या में विघ्न डालने लगा। प्रारम्भ में हनुमानजी ने उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। किन्तु बाली बार–बार उंचे स्वर में यह कहता रहा कि संसार में कोई भी उसे पराजित नहीं कर सकता।

तब हनुमानजी ने शान्त भाव से कहा, वानरराज! आप नि:संदेह अत्यन्त बलवान हैं। आपको कोई पराजित नहीं कर सकता, किन्तु इस प्रकार बार-बार अपने बल का प्रदर्शन और घोषणा करने का क्या प्रयोजन है?

यह सुनकर बाली क्रोधित हो गया। उसने हनुमानजी को युद्ध की चुनौती देते हुए कि वह उन्हें भी परास्त नहीं कर सकता है। हनुमानजी भी यह सुनकर उद्वलित हो उठे और उन्होंने चुनौती स्वीकार कर ली। निश्चय हुआ कि अगले दिन दोनों के बीच युद्ध होगा। दूसरे दिन जब हनुमानजी युद्धभूमि की ओर जा रहे थे, तभी सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी उनके सामने प्रकट हुएं। उन्होंने हनुमानजी को समझाया कि वे इस युद्ध में न जाएं, परन्तु हनुमानजी नहीं माने। उन्होंने कहा बाली ने मेरे प्रभु श्रीराम को चुनौती दी है। ऐसी स्थिति में उसकी चुनौती का उत्तर देना हमारा कर्तव्य है।

तब ब्रह्माजी ने कहा, यदि तुम युद्ध के लिए

जा ही रहे हो, तो अपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ मत जाना। अपनी कुल शक्ति का केवल दसवां भाग लेकर ही युद्ध करना। हनुमानजी ने ब्रह्माजी की बात स्वीकार कर ली और अपनी कुल शक्ति का केवल दस प्रतिशत लेकर युद्धभूमि में पहुंचें।

जैसे ही हनुमानजी बाली के सामने आएं, वरदान के प्रभाव से हनुमानजी की आधी शक्ति बाली के शरीर में प्रवेश कर गई। अचानक बाली ने अपने भीतर अपार उजा का संचार अनुभव किया। परन्तु थोड़ी ही देर में वह शक्ति उसके लिए असहनीय होने लगी। उसे लगा कि मानों उसके शरीर की नसें फट जाएंगी।

उसी समय ब्रह्माजी पुनः प्रकट हुएं और उन्होंने बाली से कहा, 'यदि अपने प्राणों की रक्षा करना चाहते हो, तो तुरन्त यहां से भाग जाओं। बाली तत्काल वहां से दौड़ पड़ा। वह लगातार दौड़ता रहा, जिससे उसके शरीर की

अतिरिक्त उर्जा धीरे–धीरे समाप्त होने लगी। कई योजन दूर जाकर उसे कुछ राहत मिली। वहां उसने पुनः ब्रह्माजी को अपने सामने खड़ा पाया।

ब्रह्माजी ने कहा, तुम स्वयं को संसार का सबसे शक्तिशाली योद्धा समझते हो, किन्तु हनुमान की कुल शक्ति के केवल दसवें भाग का आधा अंश भी तुम्हारा शरीर सहन नहीं कर सका। विचार करों, यदि हनुमान अपनी सर्म्पूण शक्ति के साथ युद्ध करने आते तो तुम्हारी क्या दशा होती! यह सुनकर बाली का अभिमान चूर हो गया। उसे अपनी भूल का गहरा पश्चात्ताप हुआ। वह श्रीहनुमानजी के पास गया, उनके चरणों में प्रणाम किया और अपने अहंकार के लिए क्षमा मांगी।

Mission & Ashram News

Bringing Love & Light
in the lives of all with the
Knowledge of Self

Activities

Activities

Activities

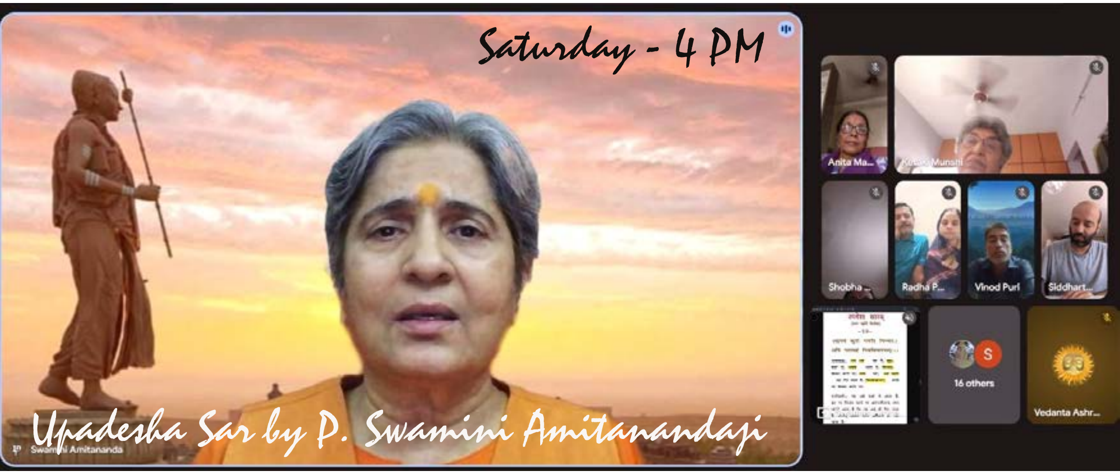

Weekly Online Classes

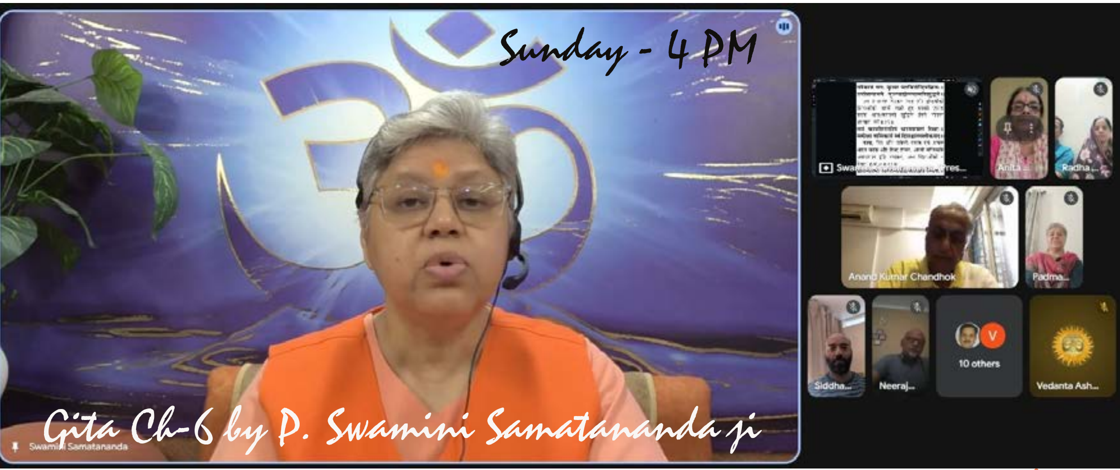

Activities

Activities

Dr. Hemant Kaushik visits Ashram

Activities

Activities

Aashirvad to Aditya Misra

up

Activities

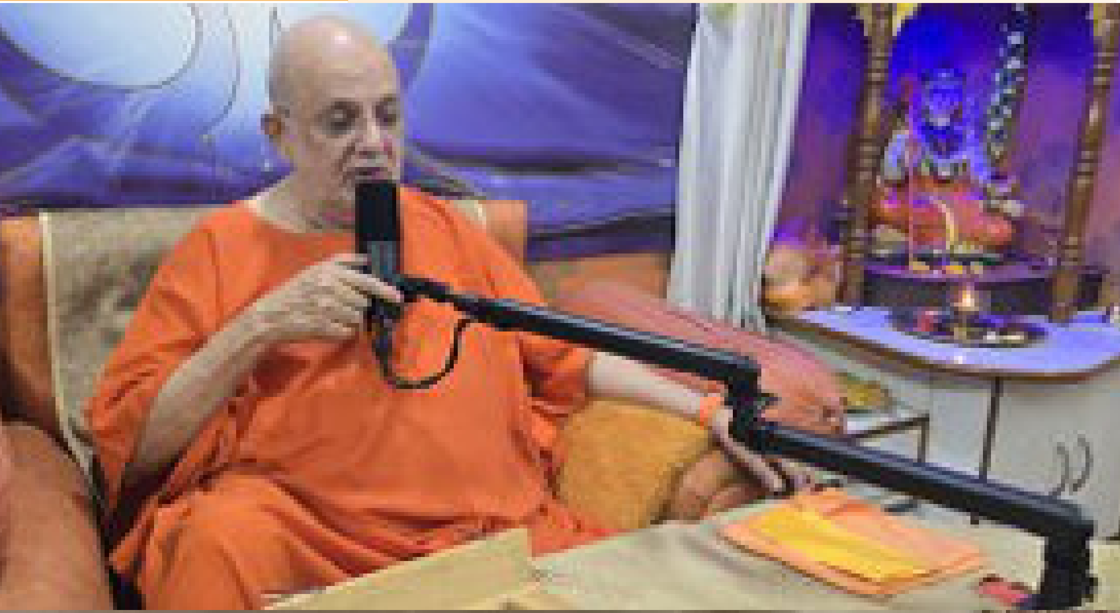

Activities

Birthday Blessings to Anash

Birthday Puja by Bharat

up

Om Sri Gurubhyo Namah

Activities

Purushottam Maas Bhoj

Activities

Purushottam Maas Puja

Purushottam Maas Samapan

Programs

Poojya Guruji Swami Atmanandaji

conducts

Daily Classes on

Bhagwad Geeta

with Shanker Bhashya on

Chapter 5 (Karma Sanyas Yoga)

@ Vedanta Ashram, Indore

VEDANTA CAMP

by Poojya Guruji & Ashram Mahatmas

From 30th Aug to 4th Sep

On Gita 8th Chapter

@ Vedanta Ashram, Indore

Click here for more details

Registration Form

Programs

VEDANTA CAMP

by P. Swamini Amitanandaji

From 12th to 16th July

On STHITAPRAGYA

Gita Ch. 2

Raman Adhyatmik Sewa Kendra,

Kheda Dist, Gujrat (In Gujrati)

Online Vedanta Class

On Upadesh Saar & Gita Ch. 6

By P. Sw. Amitanandaji &

Sw. Samatanandaji

Every Sat & Sun (4.00-5.00 PM)

on Google Meet

Internet News

Talks on (by P. Guruji & Others) :

Video Pravachans on YouTube Channel

(☝ Click here)

GITA / UPANISHAD/ PRAKARAN GRANTHAS
SUNDARKAND / HANUMAN CHALISA
SHIV MAHIMNA STOTRAM / CHANTING
MORAL STORIES ETC

Audio Pravachans (☞ Click here)

GITA / UPANISHADS / PRAKARAN GRANTHAS
SUNDARKAND / HANUMAN CHALISA
SHIV MAHIMNA STOTRAM / CHANTING
MORAL STORIES ETC

Vedanta Ashram YouTube Channel

Vedanta & Dharma Shastra Group

Monthly eZines

Vedanta Piyush - June '26 / **Vedanta Sandesh - July '26**

Visit us online :

Vedanta Mission

Check out earlier issues of :

Vedanta Piyush

Join us on Facebook :

Vedanta & Dharma Shastra Group

Subscribe to our WhatsApp Channel

Vedanta Ashram Channel

Published by:

Vedanta Ashram, Indore